

The Preamble is the moral core of the Indian Constitution, expressing its highest ideals—justice, liberty, equality, and fraternity—as foundational commitments. Far from being symbolic, it acts as a living moral compass, guiding constitutional interpretation and governance. As upheld in *Kesavananda Bharati* (1973), it forms part of the Constitution's basic structure, serving as both conscience and compass for India's democratic journey.

Caste and the Unfulfilled Promise of Social Justice

Caste as Structural Inequality:

Caste remains a rigid social hierarchy that sustains exclusion and indignity, despite Articles 15 and 17. Discrimination in education, labour, and access to justice continues across India, especially against Dalits and Adivasis.

Ambedkar's Triad of

Democracy: For Dr. B.R.

Ambedkar, liberty, equality, and fraternity were not separate ideals but interconnected tools to dismantle caste. He warned that political democracy cannot survive without social democracy

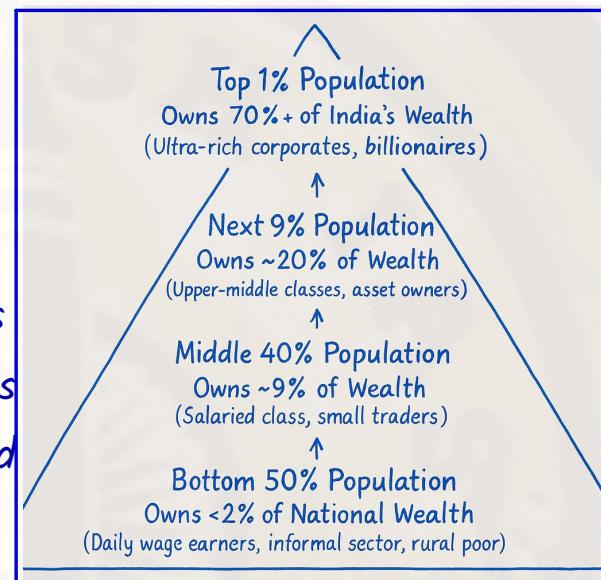


Justice Delayed and Diluted: While reservation and legal safeguards exist, implementation has often been undermined by elite capture, bureaucratic apathy, and symbolic compliance. Social justice, thus, remains a distant constitutional goal.

Poverty and the Paradox of Economic Justice

Economic Justice Defined: The

Preamble envisions economic justice as **fair distribution of wealth and opportunity**, ensuring dignity for all. It is reflected in Directive Principles like Article 39(b) and schemes such as MGNREGA, PMAY, and NFSA, aimed at reducing deprivation.



Inequality Amidst Growth: Despite GDP expansion, India's wealth is heavily concentrated — with the top 1% owning over 70% (Oxfam, 2023). This stark imbalance exposes the failure of trickle-down economics to deliver on constitutional ideals.

Welfare, Not Wealth Worship: True economic justice requires progressive taxation, robust social spending, and structural reforms. Without universal access to healthcare, education, and rural livelihoods, the constitutional promise of justice remains a legal fiction.

Patriarchy and the Incomplete Realization of Liberty

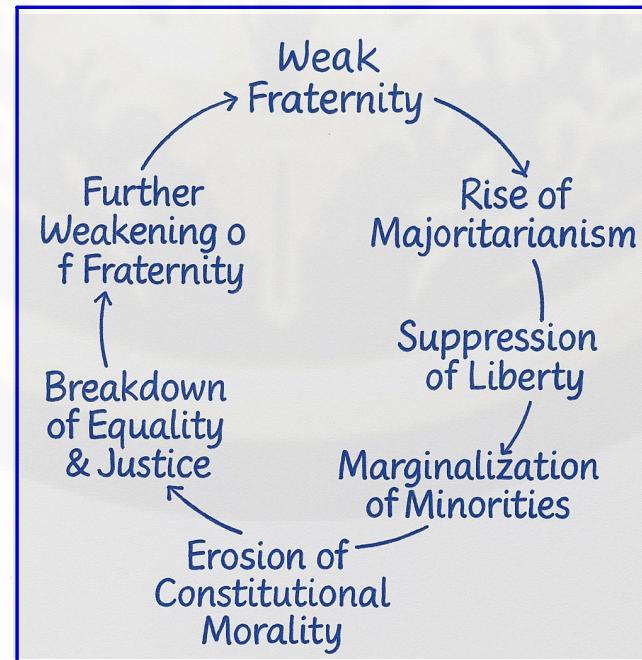
Liberty Beyond Law: The Preamble guarantees liberty of thought, expression, and belief, but for women and gender minorities, these freedoms are curtailed by social control, stigma, and violence.

Formal Rights, Substantive Deficits: Articles 14 to 16 ensure legal equality, yet the gender gap in employment, unpaid care work, and access to property shows how patriarchy still defines societal structures.

Freedom as Dignity and Autonomy: True liberty implies autonomy and agency over one's life choices. Until women can live free from coercion and fear, liberty remains a selective and gendered privilege.

Majoritarianism and the Crisis of Fraternity

Fraternity Undermined: Fraternity — the emotional unity of citizens — is corroded by communal hatred, polarization, and vigilantism. Religious minorities increasingly face alienation in public discourse.



Democracy at Risk: The Preamble's vision of democracy includes dissent, dialogue, and diversity, not just elections. Articles 19(1)(a), 19(1)(c), 29, and 30 protect free expression and minority rights, but rising censorship and shrinking civil space undermine these guarantees.

Secularism as Ethical Coexistence: Articles 25 to 28 ensure religious freedom and state neutrality. When institutions reflect majoritarian bias, secularism becomes hollow and fraternity — the foundation of unity — begins to erode.

Judiciary and Civil Society as Constitutional Stewards

Judicial Revivalism: The judiciary has occasionally invoked the Preamble to uphold rights and dignity. In Navtej Singh Johar (2018), it protected the liberty of LGBTQ+ individuals against moral policing.

People's Movements and Moral Voice: Civil protests — from Shaheen Bagh to the farmers' movement — have drawn legitimacy from the Preamble, treating it as a people's charter against institutional failure.

Preamble as Praxis: The Preamble is more than an ideal; it is a tool of public reasoning and resistance. It continues to inspire citizens to hold power accountable and reclaim constitutional morality.

Conclusion

The Preamble sets a **moral benchmark** for a just and inclusive India, but persistent realities like caste, poverty, patriarchy, and majoritarianism expose the unfinished nature of the Republic. As Ambedkar emphasized, constitutional morality must be nurtured through **ethical governance** and **active citizenship**. The Preamble is not a **static declaration** but a **living ethical framework**—its ideals must be realized not just in law, but in policy, culture, and everyday democratic practice.

भारतीय संविधान की प्रस्तावना उसका नैतिक मूल है, जो न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुता जैसे उच्चतम आदर्शों को उसकी मूल प्रतिबद्धताओं के स्पष्ट में व्यक्त करती हैं। यह केवल प्रतीकात्मक नहीं है, बल्कि एक जीवित नैतिक दिशा-सूचक के स्पष्ट में कार्य करती है, जो संविधान की व्याख्या और शासन की दिशा तय करती है। केसवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973) में यह माना गया कि प्रस्तावना संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है, जो भारत की लोकतांत्रिक यात्रा के लिए अंतरात्मा और दिशा-दर्शक दोनों की भूमिका निभाती है।

जाति और सामाजिक न्याय का अधूरा बादा

संरचनात्मक असमानता के स्पष्ट में

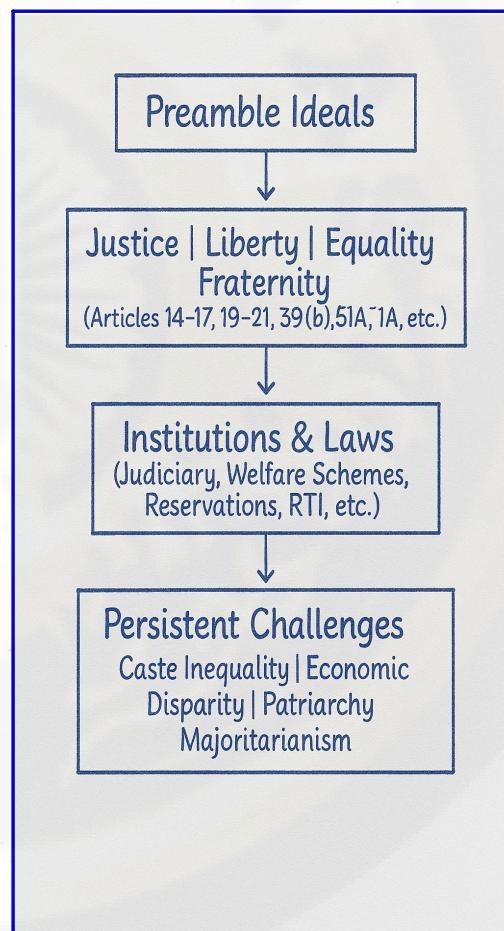
जाति: जाति एक कठोर सामाजिक श्रेणी है जो बहिष्कार और अपमान को बनाए रखती है, भले ही संविधान के अनुच्छेद 15 और 17 इसके विरुद्ध संरक्षण प्रदान करते हैं। शिक्षा, श्रम और न्याय तक पहुँच में भेदभाव आब भी व्यापक स्पष्ट से माँजूद हैं, विशेषकर दलितों और आदिवासियों के खिलाफ।

अंबेडकर का लोकतंत्र का त्रिकोणः

डॉ. भीमराव अंबेडकर के लिए स्वतंत्रता, समानता और बंधुता तीन अलग-अलग मूल्य नहीं थे, बल्कि जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए आपस में लुड़े हुए उपकरण थे।

C-MNS-GNKE उन्होंने चेतावनी दी थी कि

राजनीतिक लोकतंत्र तब तक स्थायी नहीं रह सकता जब तक वह सामाजिक लोकतंत्र पर आधारित न हो।



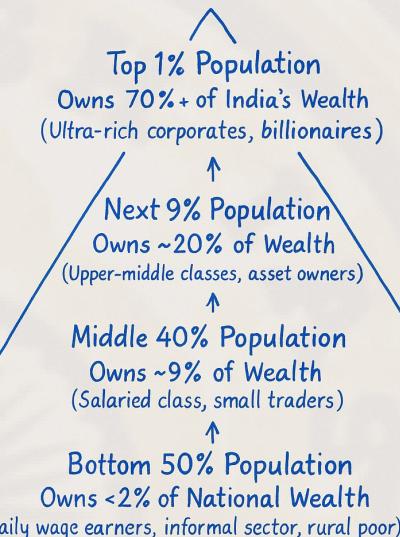
विलंबित और क्षीण होता न्यायः आरक्षण और कानूनी संरक्षण की व्यवस्थाएँ माँजूद होने के बावजूद, इनका क्रियान्वयन अक्सर उच्च वर्ग के वर्चस्व, नौकरशाही की उदासीनता और प्रतीकात्मक अनुपालन के कारण प्रभावित हुआ है। इस प्रकार, सामाजिक न्याय आज भी संविधान का एक दूरस्थ और अधूरा लक्ष्य बना हुआ है।

गरीबी और आर्थिक न्याय का विरोधाभास

आर्थिक न्याय की परिकल्पना:

प्रस्तावना आर्थिक न्याय को संपत्ति और अवसरों के समान और न्यायसंगत वितरण के रूप में देखती है, जिसका उद्देश्य सभी नागरिकों की गरिमा सुनिश्चित करना है। इसकी अभिव्यक्ति दिशानिर्देशक सिद्धांतों (विशेषतः अनुच्छेद 39(ख)) और मनरेगा, पीएम आवास योजना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (NFSA)

जैसी योजनाओं में होती है, जो वंचनाओं को कम करने के लिए बनाई गई हैं।



विकास के बीच असमानता: सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में वृद्धि के बावजूद भारत की संपत्ति अत्यधिक केंद्रित है — जहाँ केवल शीर्ष 1% आबादी के पास 70% से अधिक संपत्ति है (ऑक्सफैम, 2023)। यह गंभीर असंतुलन इस बात को उबागर करता है कि ट्रिकल-डाउन अर्थव्यवस्था संविधान में निहित आदर्शों की पूर्ति करने में विफल रही है।

कल्याण, न कि संपत्ति की पूजा: वास्तविक आर्थिक न्याय के लिए

प्रगतिशील कर व्यवस्था, सुदृढ़ सामाजिक व्यय और संरचनात्मक सुधारों की आवश्यकता होती है। जब तक सभी नागरिकों को स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और ग्रामीण आजीविका की समान और सुनिश्चित पहुँच

नहीं मिलती, तब तक संविधान में निहित न्याय का वादा केवल एक कानूनी कल्पना बनकर रह जाता है।

उम्मीदवारों को इस हाशिए में नहीं लिखना चाहिए
Candidates must not write on this margin

पितृसत्ता और स्वतंत्रता' की अधूरी प्राप्ति

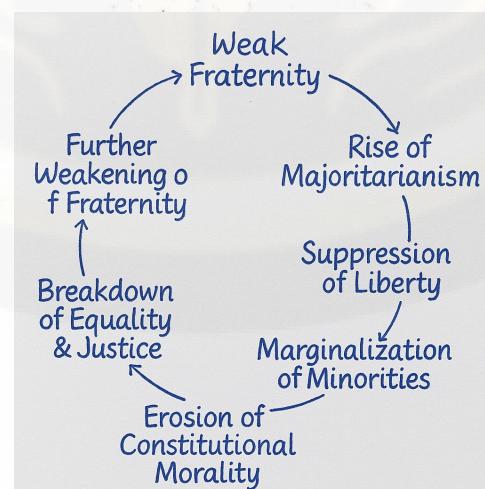
कानून से परे स्वतंत्रता: प्रस्तावना विचार, अभिव्यक्ति और आस्था की स्वतंत्रता की गारंटी देती है, लेकिन महिलाओं और लैंगिक अल्पसंख्यकोंके लिए ये स्वतंत्रताएँ सामाजिक नियंत्रण, कलंक और हिंसा के कारण सीमित हो जाती हैं।

आंपचारिक अधिकार, वास्तविक कमी: अनुच्छेद 14 से 16 तक विधिक समाजता सुनिश्चित करते हैं, फिर भी रोकलगार, अवैतनिक देखभाल कार्य और संपत्ति के अधिकार में माँजूद लैंगिक अंतर यह दर्शाता है कि समाज की संरचना अब भी पितृसत्तात्मक मानकों से संचालित होती है।

स्वतंत्रता का अर्थ गरिमा और स्वायत्तता: वास्तविक स्वतंत्रता का अर्थ है अपने जीवन से बुझे निर्णय लेने की स्वायत्तता और आत्मसम्मान। जब तक महिलाएँ भय और नियंत्रण से मुक्त होकर नहीं जी सकतीं, तब तक स्वतंत्रता एक चुनी हुई और लैंगिक विशेषाधिकार बनी रहती हैं।

बहुसंख्यकवाद और बंधुता का संकट

बंधन की भावना कमजोर होती हुई: बंधुता, जो नागरिकों के बीच भावनात्मक एकता का प्रतीक है, आज साम्प्रदायिक घृणा, ध्वनीकरण और भीड़तंत्र के कारण क्षीण होती जा रही है। धार्मिक अल्पसंख्यक लगातार सार्वजनिक विमर्श से अलग-थलग किए जा रहे हैं।



लोकतंत्र पर संकटः प्रस्तावना में वर्णित लोकतंत्र केवल चुनावों तक सीमित नहीं हैं, बल्कि इसमें विरोध, संवाद और विविधता भी शामिल हैं। अनुच्छेद 19(1)(a), 19(1)(c), 29 और 30 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं, लेकिन बढ़ती सेंसरशिप और संकुचित होता नागरिक क्षेत्र इन संवैधानिक गारंटियों को कमज़ोर कर रहे हैं।

नैतिक सह-अस्तित्व के स्पष्ट में धर्मनिरपेक्षता: अनुच्छेद 25 से 28 धार्मिक स्वतंत्रता और राज्य की निरपेक्षता सुनिश्चित करते हैं। किंतु जब संस्थाएँ बहुसंख्यक पक्षपात को दर्शाने लगती हैं, तो धर्मनिरपेक्षता केवल एक खोखला आदर्श बन जाती है और बंधुता, जो राष्ट्रीय एकता की नींव है, धीरे-धीरे क्षय होने लगती है।

संवैधानिक संरक्षक के स्पष्ट में न्यायपालिका और नागरिक समाज

न्यायिक पुनर्वागरणः न्यायपालिका ने समय-समय पर अधिकारों और गरिमा की रक्षा के लिए प्रस्तावना का संदर्भ लिया है। नवतेज सिंह जाहर बनाम भारत संघ (2018) में न्यायालय ने LGBTQ+ समुदाय की स्वतंत्रता की रक्षा करते हुए नैतिक पहरेदारी को अस्वीकार किया।

जन आंदोलनों की नैतिक आवाजः शाहीन बाग से लेकर किसान आंदोलन तक अनेक जन आंदोलनों ने प्रस्तावना से वैधता प्राप्त की, और उसे संस्थागत विफलताओं के विरुद्ध जन घोषणा-पत्र के स्पष्ट में अपनाया।

प्रयोग के स्पष्ट में प्रस्तावना: प्रस्तावना केवल एक आदर्श नहीं, बल्कि जनचिंतन और प्रतिरोध का आँखार है। यह आज भी नागरिकों को प्रेरित करती है कि वे सत्ता को उत्तरदायी ठहराएँ और संवैधानिक नैतिकता की पुनर्स्थापना करें।

उम्मीदवारों को इस
हाशिए में नहीं
लिखना चाहिए
Candidates
must not
write on
this margin

निष्कर्ष

प्रस्तावना एक ज्यायपूर्ण और समावेशी भारत के लिए नेतृत्व के मानदंड निर्धारित करती है, लेकिन जाति, गरीबी, पितृसत्ता और बहुसंख्यकवाद जैसी वास्तविकताएँ हमारे गणराज्य की अधूरी अवस्था को उजागर करती हैं। जैसा कि डॉ. अंबेडकर ने कहा, संवैधानिक नेतृत्वका को नेतृत्व शासन और सक्रिय नागरिकता के माध्यम से पोषित करना आवश्यक है। प्रस्तावना कोई स्थिर घोषणापत्र नहीं, बल्कि एक जीवंत नेतृत्व ढांचा है — जिसके आदर्शों को केवल कानून में नहीं, बल्कि नीति, संस्कृति और लोकतांत्रिक आचरण में साकार किया जाना चाहिए।